शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहु विषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Year – 1
Vol – 4
February
2024

राष्ट्रीय चेतना के विकास में राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन की भूमिका

रानी देवी
शोधार्थी
श्री कृष्णा विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

सारांश

राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन में कई विद्वतजनों द्वारा जैसे राजा राममोहन राय, देवेंद्र नाथ ठाकुर, स्वामी विवेकानंद, स्वामी दयानंद, लोकमान्य तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, महात्मा गांधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, जय प्रकाश नारायण, मदन मोहन मालवीय इत्यादि ने जागृति में योगदान प्रदान किया। इस काल में अंग्रेजों द्वारा शैक्षिक नीतियां लागू की जा रही थी, तो दूसरी ओर भारतीयों के कुछ शैक्षिक कार्यक्रम जैसे स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य समाज द्वारा डी ए वी विद्यालयों व महाविद्यालयों की स्थापना इत्यादि, संपन्न हो रहे थे। अतः अनेक राष्ट्रीय शैक्षिक संस्थानों की स्थापना की गई। अंग्रेजों ने अत्यंत कुटिलता से भारत में प्रवेश किया तथा अपने स्वार्थ सिद्धि की भावना से देश में फूट डालो राज्य करो की नीति का क्रियान्वयन किया। अंग्रेज सन 1600 से 1857 तक निरंतर भारतीयों पर विभिन्न माध्यमों से नीतियां थोपते गए व शोषण करते रहे। कांग्रेस की स्थापना के उपरांत जब कर्जन ने अपनी शिक्षा नीति को घोषित किया तो सर्वप्रथम बुद्धिजीवी वर्ग ने इस कूटनीतिक चाल को समझकर इसका विरोध किया। कांग्रेस अधिवेशन के दौरान राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन के संबंध में एक प्रस्ताव पास किया गया जो शैक्षिक विकास के उद्देश्य से निर्मित किया गया था। इस प्रस्ताव पर उदारवादी उग्रवादी दोनों ही दलों के नेताओं ने अपना सहयोग प्रदान किया। किंतु आगे चलकर उग्रवादियों ने ही पूर्णतया राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन में अग्रणी भूमिका निभाई। उग्रवादी नेता लोकमान्य तिलक ने सांस्कृतिक दृष्टि से गुलाम बनाने वाली पश्चात्य शिक्षा व ज्ञान के विकल्प स्वरूप भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति को प्रस्तुत करते हुए दक्षिण शिक्षा समाज स्थापित किया। उग्रवादी नेताओं का यह आंदोलन अत्यधिक प्रचलित हो गया, तथा परीक्षार्थियों ने विदेशी कागज से

निर्मित काफी को छुने से इनकार कर दिया। इस प्रकार संपूर्ण भारतीय जनता में जागृति का संचार हो गया।

कुंजीभूत शब्द

सम्प्रत्यय, राष्ट्रीय चेतना, स्वराज, प्राच्य पश्चात्य, शिक्षार हेरफेर, स्वदेशी आंदोलन, राष्ट्रीय शिक्षा प्रसार समिति, राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन।

शोध विस्तार

इतिहास इस बात का साक्षी है कि राष्ट्र का संप्रत्यय सर्वप्रथम भारत में विकसित हुआ था। हमारे वेद संसार के प्राचीनतम ग्रंथ हैं और इनमें राष्ट्र एवं राष्ट्रीय कर्तव्यों का विशद वर्णन है। इतना ही नहीं अपितु हमारे वेद कालीन शिक्षा का एक उद्देश्य राष्ट्रीय कर्तव्यों का बोध एवं पालन करना था। बौद्ध काल में राष्ट्रीय कर्तव्यों के स्थान पर सामाजिक कर्तव्य पर अधिक बल दिया गया ।इसका दूरगामी परिणाम यह हुआ कि एक दिन इस देश पर विदेशी मुसलमान शासको का साम्राज्य स्थापित हो गया। मुसलमान शासको ने इस देश में लगभग 500 वर्ष तक शासन किया। यह 500 वर्षों का कल संघर्षों का काल माना जाता है। इस काल में कुछ हिंदू शासको ने तो मुसलमान शासको की अधीनता स्वीकार कर ली थी परंतु कुछ इनसे बराबर टक्कर लेते रहे। उस बीच 1498में पुर्तगाली नाविक वास्कोडिगामा ने यूरोप से भारत आने के समुद्री मार्ग की खोज की। वह पहला यूरोपीय व्यक्ति था जो जलमार्ग द्वारा भारत के पश्चिमी बंदरगाह कालीकट पहुंचने में सफल हुआ। इसके बाद 1510 में यहां पुर्तगाली व्यापारियों का प्रवेश हुआ। लगभग 100 वर्ष तक उनका यहां के व्यापार के क्षेत्र में एक छात्र राज्य रहा। 1613 में यहां अंग्रेज व्यापारियों का प्रवेश हुआ। इनके बाद क्रमशः डच, फ्रांसीसी और डेन व्यापारियों ने प्रवेश किया। इन व्यापारियों में संघर्ष होना स्वाभाविक था। अंत में यहां अंग्रेज व्यापारी अपने पैर जमाने में सफल हुए।[1]

अंग्रेज व्यापारियों का मूल उद्देश्य यहां व्यापार करना था पर धीरे-धीरे वह यहां की आपसी फूट का लाभ उठाकर अपना राज्य स्थापित करने की सोचने लगे। उनकी ईस्ट इंडिया कंपनी में उनकी अपनी रक्षा के लिए अपनी सेना रहती थी। इसकी सहायता से उन्होंने 1757

में प्लासी के युद्ध में विजय प्राप्त की और 1764 में बक्सर के युद्ध में विजय प्राप्त की। अब उनका बंगाल, बिहार और अवध में शासन स्थापित हो गया ।1857 तक ईस्ट इंडिया कंपनी ने लगभग पूरे भारत को अपने अधीन कर लिया। अब यहां की जनता को अपनी भूल का एहसास हुआ ।यह एहसास सर्वप्रथम सैनिक क्षेत्र में हुआ 1857 में इस देश में सैनिक क्रांति हुई। इतिहासकार इसे भारत में राष्ट्रीय चेतना की जागृति की शुरुआत मानते हैं। परंतु अंग्रेजों ने इस क्रांति को दबा दिया और 1858 से इस देश पर सीधे इंग्लैंड सरकार का शासन हो गया।[2]

इस बीच भारत में अंग्रेजी शिक्षा का काफी प्रचार हो चुका था। 1858 तक यहां कोलकाता, मुंबई और मद्रास में यूरोपीय पद्धति के विश्वविद्यालय भी स्थापित हो चुके थे। इस शिक्षा का उस समय कुछ भी उद्देश्य रहा हो परंतु भारत में एक नई चेतना जागृत हुई सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में। 1885 में एक अवकाश प्राप्त अंग्रेज आईसीएस अधिकारी ऐलान ऑक्टेविन ह्यूम ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की। उस समय इस संस्था का मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य के अंतर्गत स्वशासन का अधिकार प्राप्त करना था। इसकी स्थापना के एक वर्ष बाद 1856 में कोलकाता में इसका अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन में पंडित मदन मोहन मालवीय ने अपने भाषण में हिंदी हिंदू हिंदुस्तान का नारा बुलंद किया। 1889 में इस मंच से लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने घोषणा की स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। बस क्या था राष्ट्रीय चेतना के जागरण का बिगुल बज गया।[3]

1893 में स्वामी विवेकानंद अमेरिका में होने वाले विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेने पहुंचे। वे वहां 1896 तक रहे ।वहां के वैभवपूर्ण जीवन से स्वामी जी बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने अनुभव किया कि हम भारतीयों की दिन हीन दशा का मूल कारण पर परतंत्रता है। इन्होंने भारत लौटने पर युवकों का आवाहन किया "तुम्हारा सबसे पहला कार्य देश को स्वतंत्र करना होना चाहिए और इसके लिए जो भी बलिदान करना पड़े उसके लिए तैयार रहना चाहिए"।[4] इस समय राष्ट्रीय चेतना के अग्रदूत रविंद्र नाथ टैगोर ने देश में राष्ट्रीय चेतना का मंत्र फूंका।

राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन

1813 में ईस्ट इंडिया कंपनी को ब्रिटिश सरकार से नया आज्ञा पत्र प्राप्त हुआ है। इस आज्ञा पत्र में कंपनी ने प्राच्य पाश्चात्य विवाद खड़ा हो गया। और बड़े मजे की बात यह है कि इस विषय पर भारतीय भी दो खेमों में बट गए। एक वर्ग के लोग भारत में केवल भारतीय भाषा, साहित्य एवं ज्ञान विज्ञान की शिक्षा के पक्ष में थे और दूसरे वर्ग के लोग भारत में भारतीय भाषा, साहित्य एवं ज्ञान विज्ञान की शिक्षा के साथ-साथ यूरोपीय भाषा अंग्रेजी, अंग्रेजी साहित्य और यूरोपीय ज्ञान विज्ञान की शिक्षा के पक्ष में थे। इनमें से प्रारंभ में पाश्चात्यवादियों का पलड़ा भारी रहा। पश्चातयवादियों में राजा राममोहन राय का नाम उल्लेखनीय है।

राजा राममोहन राय बंगाली, संस्कृत और अंग्रेजी भाषा के विद्वान थे। वह भारतीय संस्कृति के पुजारी होने के साथ-साथ पाश्चात्य संस्कृति के प्रशंसक भी थे। उन्होंने 1817 में कोलकाता में सी हिंदू कॉलेज की स्थापना की।[5] इस कॉलेज में भारतीय भाषा, साहित्य, ज्ञान और विज्ञान के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा एवं साहित्य तथा पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान की शिक्षा की व्यवस्था की गई। 1819 में इन्होंने कोलकाता में कोलकाता विद्यालय समाज की स्थापना की। इस संस्था के माध्यम से उन्होंने कोलकाता में 115 ऐसे विद्यालयों की स्थापना की जिनमें भारतीय भाषा एवं साहित्य तथा ज्ञान विज्ञान के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा एवं उसके साहित्य तथा यूरोपीय ज्ञान विज्ञान की शिक्षा की व्यवस्था की गई। राजा राममोहन राय से प्रभावित होकर श्री जय नारायण घोषाल ने बनारस में जय नारायण स्कूल की स्थापना की और उसमें प्राच्य भाषा, साहित्य, ज्ञान एवं विज्ञान के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा, साहित्य, ज्ञान एवं विज्ञान की शिक्षा की व्यवस्था की।[6] इसी प्रकार का एक कार्य आगरा में पंडित गंगाधर शास्त्री ने किया ।उन्होंने उसे समय एक लाख पचास हजार रुपयों की सहायता देकर आगरा के संस्कृत कॉलेज को आगरा कॉलेज में बदलवा दिया। दूसरी ओर प्राच्यवादी भी सक्रिय रहे। इनका नेतृत्व स्वामी दयानंद सरस्वती ने किया।

स्वामी दयानंद सरस्वती मुख्य रूप से वैदिक धर्म के प्रचारक एवं आर्य समाज के संस्थापक के रूप में जाने जाते हैं परंतु शिक्षा के क्षेत्र में भी उनका बड़ा योगदान रहा है। उन्होंने धर्म प्रचार के साथ-साथ हिंदी भाषा, संस्कृति और संस्कृत साहित्य का प्रचार प्रसार

भी किया। उन्होंने यह कार्य 1863 में शुरू किया। वे भारतीयों के लिए भारतीय भाषा साहित्य एवं ज्ञान विज्ञान की शिक्षा की पक्षधर थे। इन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा की पूरी योजना की प्रस्तुत की। वे जहां भी जाते थे वहीं धर्म प्रचार के साथ-साथ संस्कृत पाठशाला और गुरुकुलों की स्थापना की बात भी करते थे। हिंदी का प्रचार करते थे और हिंदी माध्यम से स्कूलों की स्थापना की बात करते थे। आज देश भर में जो दयानंद वैदिक स्कूल व कॉलेजों का जो जाल बिछा हुआ है यह सब दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य समाज संस्था की ही देन है। यह बात दूसरी है कि आज इनका पर स्वरूप राष्ट्रवादी न होकर पश्चात्यवादी हो गया है।

गुरुदेव रविंद्र नाथ टैगोर ने 1892 में शिक्षा हेरफेर की रचना की और इसमें तत्कालीन शिक्षा के दोष उजागर करने के साथ-साथ अपने शैक्षिक विचार प्रस्तुत किए।[7] उन्होंने अपने शैक्षिक विचारों को मूर्त रूप देने के लिए 1901 में शांति निकेतन में ब्रह्मचर्य आश्रम की स्थापना की। प्रारंभ में इसमें केवल चार छात्र थे और गुरुदेव एकमात्र शिक्षक थे। आज यह विश्व भारतीय विश्वविद्यालय के रूप में विकसित है। अंतर्राष्ट्रीय भाषा एवं साहित्य तथा कला एवं संस्कृतियों का अध्ययन केंद्र है । यह सच्चे अर्थों विश्वविद्यालय और अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा केंद्र है। गुरुदेव का कीर्ति स्तंभ भी माना जाता है।

स्वामी विवेकानंद का भी राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन में योगदान रहा। 1893 में स्वामी जी विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेने अमेरिका गए थे। वे वहां के वैभवपूर्ण जीवन को देखकर इस परिणाम पर पहुंचे कि हम भारतीयों के पिछड़ेपन के दो ही मुख्य कारण है एक परतंत्रता और दूसरा अशिक्षा। अतः उन्होंने अमेरिका से लौटने पर दो ही नारे दिए एक स्वतंत्रता का दूसरा शिक्षा का। वे भारतीयों के लिए सामान्य शिक्षा के पक्षधर के साथ-साथ विशिष्ट शिक्षा के पक्षधर भी थे। उन्हें यह जानने और समझने में देर नहीं लगी कि पाश्चात्य देश की आर्थिक संपन्नता का मूल आधार विज्ञान है। इसकी शिक्षा तब अंग्रेजी के माध्यम से ही दी जा सकती थी ।इसलिए इन्होंने राजा राममोहन राय और गुरुदेव रविंद्र नाथ टैगोर के विचारों का समर्थन किया। इन्होंने दीन हीनों कि सामान्य शिक्षा के लिए रामकृष्ण मिशन स्कूलों की स्थापना की और साथ ही अंग्रेजी माध्यम के प्राच्य पाश्चात्य दोनों ज्ञान विज्ञानों की शिक्षा देने वाले विद्यालय एवं महाविद्यालयों की स्थापना पर बल दिया। इन्होंने

उद्घोषणा किया कि हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जो हमें आत्मनिर्भर बनाएं। हमें अपने पैरों पर खड़ा करें एवं देश के विकास में सहायक हो। इन्होंने वेदांत दर्शन को जीवन में उतारने का स्तुत्य प्रयास किया।

भारत में राष्ट्रीय शिक्षा के स्वरूप पर प्रारंभ से ही विचार होता रहा है। भारत में अंग्रेजी काल को पुनर्जागरण का काल माना जाता है। इस काल में भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा के स्वरूप पर भी खूब विचार हुआ पर इसे आंदोलन का रूप 1905 में कोलकाता में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में दिया गया।[8] इस अधिवेशन में स्वदेशी आंदोलन शुरू करने का निर्णय लिया गया और इसके चार मुद्दे निश्चित किए गए स्वराज की प्राप्ति, स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, और राष्ट्रीय शिक्षा की मांग। इसमें राष्ट्रीय शिक्षा की मांग के संदर्भ में निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया गया

"अब वह समय आ गया है जब संपूर्ण भारत के व्यक्ति समस्त बालक बालिकाओं की राष्ट्रीय शिक्षा के बारे में ईमानदारी से सोचें और उसका देश की आवश्यकता के अनुसार संगठन करें"[9]

राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन के आधारभूत सिद्धांत

राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन के नेताओं ने उस समय राष्ट्रीय शिक्षा को निम्नलिखित आधारों पर विकसित करने पर बल दिया। जिन्हें राष्ट्रीय शिक्षा के सिद्धांत के नाम से जाना गया। राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन के सिद्धांत निम्न प्रकार के थे।

1. **शिक्षा भारतीय नियंत्रण मे -** राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन के नेताओं का का विचार था कि शिक्षा भारतीयों के नियंत्रण में होनी चाहिए। शिक्षा की संरचना, उसका संगठन और संचालन का अधिकतर भारतीयों को होना चाहिए। शिक्षा पूर्ण रूप से भारतीयों के हाथ में होनी चाहिए।
2. **शिक्षा के उद्देश्य एवं आदर्श भारतीय -** इस संबंध में सभी नेता एक मत कि भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा के उद्देश्य और आदर्श भारत की अपनी संस्कृति पर आधारित होने चाहिए। उसमें भारतीय आदर्शों का समावेश होना चाहिए न कि इंग्लैंड के आदर्शों का।

इस संबंध में श्रीमती एनीबेसेंट ने बड़े विनम्र भाव से कहा था कि "ब्रिटेन के आदर्श ब्रिटेन के लिए अच्छे हैं परंतु भारत के लिए भारत के आदर्श ही अच्छे हैं"।

3. **मातृभूमि के प्रति प्रेम और राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण -** राष्ट्रीय शिक्षा का अर्थ यह है कि वह बच्चों में मातृभूमि के प्रति प्रेम और समर्पण की भावना जागृत करे, उनमें राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण करे और यह तभी संभव है जब उन्हें प्रारंभ से ही स्वदेशी भाषा, साहित्य और इतिहास का ज्ञान कराया जाए।
4. अंग्रेजी के वर्चस्व की समाप्ति - अधिकतर नेता इस पक्ष में थे कि न तो अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाया जाए और न ही उसकी शिक्षा को अनिवार्य किया जाए। गांधी जी ने तो एक बार तत्कालीन समाचार पत्र यंग इंडिया में लिखा था कि "हमारे बालक यह सोचते हैं कि बिना अंग्रेजी के अध्ययन के सरकारी नौकरी प्राप्त नहीं की जा सकती। बालिकाओं को अंग्रेजी का अध्ययन विवाह करने के लिए प्रमाण पत्र के रूप में कराया जाता है। समाज में अंग्रेजी का घुन लग गया है। मेरे विचार से यह सब हमारी दासता और पतन का प्रतीक है"। इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन के सभी नेता अंग्रेजी शिक्षा के वर्चस्व की समाप्ति के पक्ष में थे।
5. **व्यावसायिक विषयों का समावेश -** उसे समय हमारी शिक्षा ज्ञान प्रधान थी। राष्ट्रीय नेताओं ने उसे जीवकोपार्जन उन्मुख बनाने पर बल दिया। इस संदर्भ में लाला लाजपत राय के शब्द उल्लेखनीय है "भारतीय निर्धनता जीवन का बहुत ही दुखद तथ्य है। इसका मुख्य कारण शिक्षा के साधनों का अभाव है। ऐसी स्थिति में लोक शिक्षा का प्रथम उद्देश्य भारत के नागरिकों को व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करना होना चाहिए।
6. **मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा -** सभी राष्ट्रीय नेता इस बात से सहमत थे कि जब तक शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी रहेगी तब तक देश में शिक्षा का प्रसार नहीं किया जा सकता, उसे जन-जन तक नहीं पहुंचाया जा सकता। इस दृष्टि से उन्होने मातृ भाषाओं (क्षेत्रीय भाषाओं) को शिक्षा का माध्यम बनाने पर बल दिया।
7. **पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान की शिक्षा -** राष्ट्रीय शिक्षा का स्वरूप निश्चित करने वालों में कुछ नेताओं का मत था कि अन्य देशों से संपर्क स्थापित करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय भाषा अंग्रेजी का ज्ञान आवश्यक है और भारत का भौतिक विकास करने के लिए

यूरोपीय ज्ञान विज्ञान का ज्ञान आवश्यक है ।अत: राष्ट्रीय शिक्षा योजना में इन्हें उपयुक्त स्थान मिलना चाहिए। लाला लाजपत राय ने तो यहां तक कहा कि "मेरे विचार से भारत में यूरोपीय भाषाओं, साहित्य और विज्ञानों के अध्ययन को प्रोत्साहित न करने का प्रयास मूर्खता और पागलपन होगा"।

राष्ट्रीय शिक्षा संस्थानों की स्थापना

बंग भंग के विरोध में राष्ट्रीय आंदोलन जोरों पर था। अध्यनरत छात्र भी इस आंदोलन में कूद पड़े थे। आंदोलन को दबाने की दृष्टि से गवर्नर जनरल एवं वायसराय लॉर्ड कर्जन ने एक आदेश निकाला कि जो विद्यार्थी आंदोलन में भाग ले उन्हें शिक्षा संस्थानों से निकाल दिया जाए। परिणामतहजारों छात्र शिक्षण संस्थानों से निकाल दिए : गए। कुछ छात्रों ने स्वेच्छा से विद्यालयों पर पढ़ाना छोड़ दिया और इस आंदोलन में कूद पड़े। अब राष्ट्रीय नेताओं के सामने इन युवाओं की शिक्षा की व्यवस्था का प्रश्न उपस्थित हुआ। इस क्षेत्र में सबसे पहला कदम उठाया बंगाल ने। बंगाल में श्री गुरुदास बनर्जी की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा प्रसार समिति की स्थापना की गई। इस समिति ने पूर्वी बंगाल में 40 और पश्चिम बंगाल में 11, कुल मिलाकर 51 राष्ट्रीय हाई स्कूलों की स्थापना की। इस समिति ने कोलकाता में एक टेक्निकल इंस्टिट्यूट भी खोला जो आगे चलकर जादवपुर कॉलेज आफ इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी के रूप में विकसित हुआ।गुरु रविंद्र नाथ टैगोर, श्री रास बिहारी बोस और श्री अरविंद घोष के प्रयास से कोलकाता में राष्ट्रीय कॉलेज की स्थापना हुई। श्री अरविंद घोष इसके प्राचार्य नियुक्त किए गए। यह कॉलेज उच्च शिक्षा के साथसाथ राष्ट्रीय आंदो-लन का केंद्र बना। इन्हीं सिद्धांतों पर पुणे में समर्थ विद्यालय की स्थापना की गई। देश के अन्य भागों में भी राष्ट्रीय विद्यालय खोले गए। इस क्रम में आर्य समाज द्वारा स्थापित गुरुकुल और डी ए वी कॉलेज की स्थापना उल्लेखनीय है। राष्ट्रीय विद्यालय में मातृभाषाओं के माध्यम से शिक्षा की व्यवस्था की गई और जीवन उपयोगी विषय और कौशलों को पाठ्यक्रमों में स्थान दिया गया। देश के प्रति प्रेम और समर्पण की भावना का विकास करके राष्ट्रीय चेतना का विकास करना शिक्षा आंदोलन का मुख्य उद्देश्य रहा।[10]

सन्दर्भ

1. लाल बिहारी रमन, भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याएं, पृष्ठ संख्या 144, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ (उ.प्र.)

2. मदान पूनम, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास तथा समस्याएं, पृष्ठ संख्या 135, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा (उ.प्र.)
3. लाल बिहारी रमन, भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याएं, पृष्ठ संख्या 146, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ (उ.प्र.)
4. पांडेय रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज के शिक्षक, पृष्ठ संख्या231, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा (उ.प्र.)
5. उमा टंडन, डॉ. अरुण गुप्ता, उदीयमान भारतीय समाज के शिक्षक, पृष्ठ संख्या 180, आलोक प्रकाशन, लखनऊ (उ.प्र.)
6. डॉ. मालवीय राजीव, शिक्षा के मूल सिद्धांत, शारदा पुस्तक जीवन इलाहाबाद (उ.प्र.)
7. मदान पूनम, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास तथा समस्याएं, पृष्ठ संख्या 138, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा (उ.प्र.)
8. प्रो. पाठक आर. पी. , रविंद्र नाथ टैगोर का शिक्षा दर्शन, नई दिल्ली ।
9. प्रो. रूहेला एस. पी. शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय आधार, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा (उ.प्र.)
10. शर्मा आर. एन. समकालीन भारतीय दर्शन, अटलांटिक पब्लिकेशर्स, नई दिल्ली।